International Journal in Management and Social Science
Volume 07 Issue 06, June 2019 ISSN: 2321-1784 Impact Factor: 6.319
Journal Homepage: http://ijmr.net.in, Email: irjmss@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal

भारतीय संस्कृति का संरक्षक–संवर्धक : विजयनगर साम्राज्य – कृष्णदेव राय

डॉ. राजकुमार, एसोसिएट प्रोफेसर,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिवानी

विजय नगर साम्राज्य की स्थापना संयोगवश घटित घटनाओं का परिणाम नहीं था। बल्कि इसके कारण भारतीय इतिहास के आधारभूत तर्क में छिपे थे । इसकी उत्पति विवाद का विषय है परन्तु विभिन्न विद्वान उत्पति से संबंधित घटनाओं के विषय में एकमत हैं कि इसकी उत्पति अवसर एवं विश्वास का परिणाम थी । दिल्ली सल्तनत दक्षिणी भारतीय क्षेत्रों को नियन्त्रित रखने में असफल रहा तथा इसी समय हिन्दुवाद का उदय हुआ । इसकी स्थापना का मात्र राजनीतिक महत्त्व नही वरन् यह एक प्रकार के तीव्र सांस्कृतिक आन्दोलन की अभिव्यक्ति थी । विशाल राजनगर के उदगम सम्बन्धी अनेक परम्परागत वर्णनों के सार रूप में रॉबर्ट सेवेल कहता है कि महापुरूषों के नेतृत्व में दिल्ली सल्तनत के विघटन के समय बहमनी साम्राज्य की तरह विजयनगर साम्राज्य का उदय हुआ । उसके अनुसार संगम के पांच पुत्रों ने जिनमें हरिहर और बुक्का सर्वाधिक प्रसिद्ध थे के द्वारा तुंगभद्रा के उत्तरी तट पर स्थित अनेगुड्डी दुर्ग के सम्मुख विजयनगर शहर एवं राज्य की नींव डाली गई। उन्होने तत्कालीन प्रसिद्ध ब्राह्मण साधु माधव विद्यारण्य तथा उनके भाई वेदों के प्रसिद्ध भाष्यकार सायण की प्ररेणा से यह महान साहसिक कार्य तथा माधव विद्यारण्य की सलाह पर अपने आचरण की शिक्षा निरूपण किया और सभी पांच भाईयों ने उत्तर के आक्रमणकारियों की प्रगति के विरूद्धप्रतिरोध संगठित करने का गम्भीर प्रयत्न किया ।

भारत के इतिहास में विजयनगर साम्राज्य का महत्त्व यह है कि लगभग तीन शताब्दियों तक वह देश के प्राचीनतर धर्म एवं संस्कृति का साथ देता रहा और उन्हे नए विचारों एवं शक्तियों के प्रचण्ड आक्रमण से निगल जाने से बचा लिया। यह विजयनगर ही था जिसके पास तुर्क अफगान सल्तनत के पतन तथा महत्वपूर्ण देशी शक्तियों के अभ्युदय के कारण 'तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति की कुंजी थी।'

1336 में हरिहर एवं बुक्का द्वारा स्थापित साम्राज्य अपने क्षेत्रीय विस्तार एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों के उतार–चढ़ावों के बावजूद देवराय द्वितीय ने नगर एवं राज्य की प्रतिष्ठा में वृद्धि की जिसका वर्णन निकोलकोन्टी व अब्दुरज्जाक जैसे विदेशी यात्रियों ने किया है, बाद के शाशक नरसिंह सालुव ने अपने विश्वासी सेनापति नरस नायक तुलुव को राज्य के प्रशासन का दायित्व सौंपकर बुद्धिमता प्रदर्शित की । 1509 में इसी तुलुव वंश का कृष्ण देव राय गद्दी पर बैठा जिसने अपने जीवनकाल 1529 तक, इस साम्राज्य को युद्ध तथा शांति की कलाओं में

उल्लेखनीय सफलताएँ दिलाकर, साम्राज्य तथा स्वयं को ऐतिहासिक रूप से महान व समकालीन हिन्दू राज्यों में सर्वाधिक शक्तिशाली, विजयनगर का सबसे बड़ा शासक तथा भारत के इतिहास के सबसे प्रसिद्ध राजाओं में से एक के रूप में सुस्थापित किया था जैसा कि मुगल बादशाह बाबर व अनेकों विदेशी यात्रियों ने बखूबी लिखा है ।

कृष्ण देवराय एक फुर्तीला योद्धा, महान कुटनीतिज्ञ व एक उम्दा इन्सान था । उसने उम्मतुर से शिवसमुद्रम, गजपति प्रताप रूद्र से उदयगिरि, कोन्डविडु , कोंडपली व विजगापट्टम और बीजापुर के शासक ईस्माईल आदिलशाह से रायपुर दोआब छीनकर अधिकार कर लिया । उसने युद्ध में विरोधी शासकों के परिजनों व आश्रितों को बन्दी बनाकर भी उनके साथ बहुत सम्मान का व्यवहार किया जो भारतीय संस्कृति का श्रेष्ठतम सूत्र है, जिसका अनुशरण बाद में छत्रपति शिवाजी महाराज ने भी किया । कृष्ण देवराय के स्वभावकी भूरी–भूरी प्रशंसा डोमिंगो पीज ने की है '' वह सबसे अधिक विद्वान एवं पूर्ण राजा है जितना सम्भवत : हुआ जा सकता है, स्वभाव से ही प्रसन्न एवं परम प्रफुल्लित है, वह ब्राह्मणों का सम्मान करता है वे कठिन कार्यों के लिए उपयुक्त नहीं लेकिन प्रभावशाली, ईमानदार व सुन्दर होते हैं। वह ऐसे व्यक्तियों में से है जो विदेशियों की हैसियत देखे बिना उनका सम्मान और कृपापूर्ण सत्कार करता है, वह एक महान शासक तथा न्यायपूर्ण व्यक्ति है किन्तु कभी–कभी क्रोध के वशीभूत हो जाता है, जितनी सेना और प्रदेशों पर उसका अधिकार है उस हिसाब से वह श्रेणी में किसी से भी बड़ा राजा है किन्तु सभी बातों में वह इतना शूर और पूर्ण है कि ऐसा प्रतीत होता है कि उसके जैसे व्यक्ति के पास जितना होना चाहिए उसकी तुलना में असल में उसके पास कुछ नहीं है । ''

दक्षिण भारत की कला एवं वास्तुकला पूर्व–मुस्लिम काल में अपने गौरव के चर्मोत्कर्ष पर पहुँच गयी थी परन्तु अलाउदीन की सेना द्वारा इसे भारी क्षति पहुँचाई गयी थी ।विजयनगर की कला को द्रविड़ कला कहा गया है परन्तु इसकी वास्तुकला अलग प्रकार की है जिसमें पेंचीदा वस्तुएँ प्रयोग की गयी है । आंशिक रूप से नष्ट हुए मंदिरों की मरम्मत की गयी एवं बृहद आकार प्रदान किया गया, पुराने मंदिरों के ध्वंसावशेषों के ऊपर नये मंदिरों की व्यापक योजना बनाई गयी एवं उनका निर्माण किया गया । नव निर्मित मंदिर आकार–प्रकार में वृहद थे जैसा कि कृष्णदेवराय द्वारा निर्मित हजारा राम एवं विट्ठल देव मन्दिर,जिनमें एक साथ हजारों भक्तगण आ सकते थे । मंदिर वास्तुकला में कई नये तत्व जोड़े गये–कल्याण मंडप या अंलकृत स्तंभ, बरामदे के बायें किनारे पर मण्डप का निर्माण, गर्भगृह और गोपुरम पूर्ववत बने रहे । अम्मन धर्मस्थानों का निर्माण सहायक मंदिरों के रूप में किया गया। कल्याण मण्डप इसलिए महत्वपूर्ण था क्योंकि उस पर विभिन्न देवताओं की आकृतियाँ बनायी गयी, साथ ही विशेष उत्सवों की दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण था ।

यहाँ की वास्तुकला में स्तंभों का प्रचुरता में प्रयोग किया गया ताकि निर्माणों का आकार बढ़ाया जा सके और वृहद सभागारों का निर्माण संभव हो, जिसमें निर्माण अंलकृत हुआ तथा

प्राचीन भारतीय मूर्तिकला का आकार देखने को मिला । एक हजार स्तंभ वाले हजारा मन्दिर का निर्माण विजयनगर मंदिर कला का आदर्श स्वरूप था। स्तंभों का निर्माण इस प्रकार किया गया कि वे अलंकारिक दिखते थे । मूर्तियों के पट्ट विभिन्न पौराणिक कथानकों को दर्शाते थे,भव्य आकारों एवं अलंकरण वाले गोपुरम मंदिरों में प्रवेश के लिए बड़े द्वारो का निर्माण करते थे । धीरे–धीरे इनका आकार एवं संख्या बढ़ती गयी । यह रोचक तथ्य है कि धर्म–निरपेक्ष भवनों में इंडो–इस्लामिक विशेषताएँ पायी गयी हैं जैसे गुंबद एवं कमल का निर्माणको पूर्व के भव्य विजयनगर के ध्वंसावशेषों में अभी भी देखा जा सकता है, जिसमें सौदर्य एवं कलात्मक तत्व अभी भी विद्यमान हैं, विट्ठल एवं हजारा राम मंदिर इसके उदाहरण हैं । ऊंचे चबूतरे, बड़े सभागार एवं स्तंभ इसमें देखे जा सकते हैं । आधुनिक भारत के अधिकांश प्रसिद्ध मंदिर तुंगभद्रा के दक्षिण में अवस्थित हैं, इनका निर्माण विजयनगर काल में ही हुआ है यथा कुंभकोणम, काँचरपुरम, श्रीरंगम व वेल्लोर आदि ऐतिहासिक मंदिरों से भरे पड़े हैं ।

विजयनगर वास्तुकला का अंतिम चरण मदुरा शैली के रूप में साम्राज्य के पतन के बाद भी फलता–फूलता रहा इसके उदाहरण मदुरै, श्रीरंगम, रामेश्वरम, तिरूवल्लूर, चिदंबरम, तिन्नावेली एवं सुदूर दक्षिण के कई स्थानों में देखा जा सकता है। विजयनगर के दरबार में उच्चकोटी के कई चित्रकार भी थे हालांकि चित्रकला धीरे–धीरे विलुप्त होती चली गयी, पुर्तगाली लेखकों एवं अब्दुरज्जाक ने विजयनगर सम्राट की सेवा में रहने वाले चित्रकारों के उच्च स्तर की चर्चा की है ।विजयनगर के शासक शिक्षा एवं ज्ञान के महान संरक्षक थे इनका शासन संस्कृत साहित्य के लिए पुर्नजागरण काल था । इन्होने द्रविड़ भाषाओं तमिल, तेलगू, कन्नड़ एवं मलयालम के क्षेत्र में नव शास्त्रीय द्वार खोले। यद्यपि तमिल को छोड़कर इन भाषाओं की सामग्री संस्कृत के मूल पाठों से ली गयी थी । ये साहित्य, भक्ति आन्दोलन के माध्यम ये सांस्कृतिक आदान–प्रदान के वाहक बने । उत्तर भारत की तरह यहाँ भी संस्कृत समाज के कुछ वर्गों के लिए ज्ञान का माध्यम बना रहा । दरबार द्वारा ऐतिहासिक कथा एवं आत्मकथा लेखन को प्रोत्साहित किया गया । सायण के नेतृत्व में बड़ी संख्या में ब्राह्मणों और आरण्यकों पर टिकाएँ लिखी गई । हेमाद्रि ने धर्मशास्त्र पर टीका लिखी, हालांकि सामाजिक संस्थाओं की प्रगति में इन लेखकों का योगदान थोड़ा ही रहा ।

विजयनगर के अधिकांश शासक अत्यन्त शिक्षित थे एवं इनमें से कुछ ने साहित्यक योगदान दिया। कृष्णदेव राय संस्कृत एवं तेलुगू का विद्वान था उसने बड़ी संख्या में विद्वानों को संरक्षण दिया, कहा जाता है कि कृष्णदेव राय ने संस्कृत में जाम्बवती कल्याणम तथा तेलुगू में अमुक्तमल्यद की रचना की । जैन, वैष्णव एवं शैवों ने तमिल में धार्मिक साहित्य प्रस्तुत किए। मयकन्दर ने शिवाननंद बोध की रचना की, अरूनंदी का शिवानंद, सित्तर की शैव मत पर एक महान क्लासिक है । उस समय के धर्म निरपेक्ष साहित्य में पुलगेंड्डी का नलबेन्बा तथा विलेपुतुरर का भारतम से सुशोभित था जिन्हे अष्टदिग्गज कहा जाता है, इनमे पेददन सर्वाधिक प्रसिद्ध था

जिसे अधिराजकविपितामह की राजकीय उपधि प्रदान की गयी थी, इन्होने मनु चरित की रचना की । तिम्मन ने परिजात परहण, तेनाली रामकृष्ण ने पाण्डुरंग महात्मय रचा । इन सभी ने तेलुगु काव्य को एक नयी दिशा दी। पेददन को आधुनिक तेलुगु का जनक कहा जाता है । तिम्मन द्वारा लिखित प्रेम कथानक लम्बे समय तक लोगों के मस्तिष्क में ताजा बना रहा ।

इस समय संस्कृत साहित्य एवं अन्य धर्मनिरपेक्ष साहित्य का तेलुगू में अनुवाद कार्य भी बड़े पैमाने पर हुआ । इसे कृष्णदेव राय ने प्रोत्साहित किया । श्रीनाथ को देवराय द्वितीय द्वारा वनकाभिषेक की उपाधि दी गयी। पोतन जकन्ना एवं दुग्गन ने संस्कृत एवं प्राकृत रचनाओं का तेलुगु में अनुवाद किया

विजयनगर साम्राज्य का शासन काल कन्नड़ एवं मलयालम के विकास का काल भी था । इस अवधि का प्रथम कन्नड़ विद्वान मधुरा ने धर्मनाथपूरन की रचना की जो 15वें जैन तीर्थांकर से संबंधित है । पालकुन्की सोमनाथ ने वीरशैववाद पर तेलुगु एवं कन्नड़ में कई उत्साह का निर्माण किया । कवियों का यह उत्साह एवंविद्वता काव्य के नए रूपों प्रबंध, द्विअर्थी एवं यक्षगान के रूप में सामने आया । प्रेम, भक्ति, दर्शन एवं उपदेशात्मक तत्वों का संतुलन काव्य में बना रहा । इस समय सौंदर्यबोध अन्य तत्वों से कही बढ़कर कवियों का प्रमुख रचनाएँ की । मालनारय ने कन्नड़ एवं संस्कृत में बहुमुल्य साहित्य रचे, वह कृष्णदेव राय के दरबार में रहता था । कन्नड़ का व्याकरण कर्नाटक शब्दानुशासन इसी समय लिखा गया। मलयालम का प्रथम प्रमाणिक साहित्य कार्य उननुनेली संदेशम इसी समय सामने आया जो कालिदास के मेधदूत पर आधारित था। नम्बूदरी ब्राह्मणों ने मलयालम साहित्य में एक नयी शैली का विकास किया जिसे धकियार्कुल्तुस्त कहा जाता है इसमें पुराणों के कथानकों को नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है । माधव पणिकर ने भगवद गीता कामलयालम में अनुवाद किया । अंत में कहा जा सकता है कि तत्कालीन समृद्ध राजकीय काल ने साहित्य में नव क्लासिकी परम्पराओं एवं रोमांटिक अभिव्यक्ति के लिए प्रचुर लेखन हुआ ।

विजयनगर की सांस्कृति उपलब्धियों को कृष्णदेव राय ने अपने उल्लेखनीय कार्यो की बदौलत नई व चिरस्मरणीय बुलंदियाँ प्रदान की ।उसके राज्यकाल में विजयनगरका न केवल साम्राज्य का क्षेत्र विस्तार चर्मोत्कर्ष पर पहुंचा बल्कि कला एवं विद्या के प्रोत्साहन और नवसृजन हेतु भी स्मरणीय था जो उपरोक्त से प्रमाणित होता है कि कृष्ण देवराय स्वयं प्रकाण्ड विद्वान और विद्या का उदार आश्रयदाता था जैसा की कृष्ण शास्त्री लिखते हैं कि '' वह अपनी धार्मिक उमंग तथा उदारता के लिए किसी भी प्रकार कम विख्यात नही था । वह हिन्दू धर्म के सभी सम्प्रदायों का सम्मान करता था। यद्यपि उसकी अपनी आस्था वैष्णव धर्म में थी । पराजित शत्रु के प्रति दयालुता विजित नगरों के निवासियों के प्रति उसके दया एवं दानशीलता के कार्य, उसका महान सैनिक पराक्रम, जिसके कारण वह अपने जागीरदारों तथा अपनी प्रजा का समान भाव से प्रियबन गया था, विदेशी राजदूतों–यात्रियों के प्रति उसका अनअवरत स्वागत तथा दयालुता, उसकी

प्रभावशाली व्यक्तिगत आकृति, उसका सुखप्रद रूप तथा नम्रभाषण जिनसे एक पवित्र एवं प्रतिष्ठित जीवन का पता चलता था, साहित्य एवं धर्म के लिए उसका प्रेम अपनी प्रजा के कल्याण के लिए उसकी उत्कंठा तथा विशेषकर अति विशाल धन–राशि जो वह मंदिरों, ब्राह्मणों व गरीबों को दान के रूप में देता था। '' इन सब के कारण वह वस्तुतः दक्षिण भारत का सबसे महान राजा था जो इतिहास के पन्नो को कान्ति प्रदान करता है । वास्तव में विजयनगरउसके राज्य काल में गौरव एवं समृद्धि के शिखर पर पहुंच गया था जो भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का एक जाज्वल्यमानरत्न था और यही अलंकरण उस काल को विभूषित करता है ।

उपरोक्त विवरणों से प्रमाणित होता है कि विजयनगर साम्राज्य दक्षिण भारत में हिन्दू धर्म एवं संस्कृति के सशक्त संरक्षक एवं संवर्धक के रूप में सामने आया । इसका कारण था कि विजयनगर के शासक अपनी आरम्भिक स्थिति के प्रति सजग थे । इस राजवंश की स्थापना में भी धार्मिक तत्व तथा साधु–संतों की प्ररेणा और मार्ग दर्शन था जिससे यहाँ के शासकों ने सन्त – महात्माओं, शत्रु–स्त्रियों, बंदियों, विजितो, शासितों व देशी तथा विदेशी यात्रियों व मेहमानों के प्रति सम्मान, दया–दान व मानव गरिमा आदि का प्रचुर प्रयोग किया, विशेषकर कृष्ण देवराय के लिए ये वे प्रेरक तत्व थे जो भारतीय संस्कृति का शाश्वत व श्रेष्ठतम मार्ग रहा है। निश्चित तौर पर वह विजयनगर साम्राज्य ही था जिसने लम्बे समय तक न केवल भारत की प्राचीनतर सभ्यता एवं संस्कृति का इस्लामिक सैलाब से संरक्षण किया बल्कि उसका कठिनतर समय में प्रचुर मात्रामें संवर्धन भी किया ।

संदर्भ ग्रन्थ सूचि

भारत का वृहत इतिहास : मध्यकालीन भारत, मजूमदार, रायचौधरी, दत्त
मध्यकालीन भारत का इतिहास : एल. पी. शर्मा
मध्यकालीन भारत का इतिहास : भाग 1 एच. सी. वर्मा
एक फोरगोटन अम्पायरः रॉबर्ट सीवेल
मेमोरीज ऑफ बाबर : स्कोलर सलैक्ट
बाबरनाम : अनुवादित सुसन्ना एनिटी बेवरिज
नेरेटिव ऑफ डोमिगों पीज – डोमिगों पीज
दी बुक ऑफ डयूरेट बारबोसा – बारबोसा
दी इंटीनेरेरी ऑफ लुडोविको दी बार्थेमा – बार्थोलाम्यू डियाज
अब्दुरज्जाक – ईरान का राजदूत – विजयनगर की यात्रा का विवरण
निकोलकोंटी– इटली का यात्री देवराय द्वितीय के समय विजयनगर की यात्रा का विवरण